सामाजिक मुद्दों में वैज्ञानिकों की भूमिका

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

इटली के लाअकीला नामक स्थान पर कुछ अजीबोगरीब घट रहा है। यहां 5 अप्रैल 2009 के दिन भूकंप आया था जिसने जान-माल की काफी तबाही मचाई थी। 300 से ज़्यादा लोग मारे गए थे। लाअकीला के नागरिकों ने 7 वैज्ञानिकों पर हत्या का मुकदमा दायर किया है।

मुकदमे की सुनवाई इटली की अदालत में चल रही है और वैज्ञानिक समुदाय बेसब्री से फैसले का इन्तज़ार कर रहा है। नागरिक भी न्याय की उम्मीद लगाए बैठे हैं।

यह शायद पहली बार है जब किसी समुदाय ने वैज्ञानिकों के एक समूह को यह आरोप लगाकर अदालत में खींचा है कि उनकी लापरवाही की वजह से कई सारे लोगों की जानें गई हैं।

अपेक्षा के अनुरूप, वैज्ञानिक सभाओं और अकादमियों ने फरियादियों की निंदा की है; ऐसे एक समूह ने कहा है कि यह स्थानीय वकीलों की नादानी है और यह अन्यायपूर्ण है कि वैज्ञानिकों पर यह आरोप लगाया गया है कि उन्होंने समुदाय को आसन्न भूकंप के बारे में चेतावनी नहीं दी। इस घटना पर दुनिया भर के मीडिया व विज्ञान पत्रिकाओं में काफी कुछ लिखा गया है।

सवाल यह है कि इन सात वैज्ञानिकों पर हत्या का यह मुकदमा क्यों चल रहा है जबकि वे इस शहर के बाशिंदों को सलाह देने व मदद करने की कोशिश कर रहे थे। यह शहर भूकंप प्रभावित क्षेत्र में स्थित है और यहां के लोग इस खतरे के साथ जीना सीख चुके हैं।

एक नागरिक का कहना है: "मैं पागल नहीं हूं। मैं जानता हूं कि वे भूकंप की भविष्यवाणी नहीं कर सकते। आरोप का आधार यह है कि कानून द्वारा उन पर (समुदाय को परामर्श देने वाले वैज्ञानिक होने के नाते) कुछ दायित्व लागू हैं। यह उनका दायित्व था कि वे सारे कारकों को ध्यान में रखते हुए जोखिम का आकलन करते। यह उन्होंने नहीं किया।" एक अन्य नागरिक का कहना है: "यह विज्ञान के खिलाफ मुकदमा नहीं है। उनकी (वैज्ञानिकों की) सलाह लगातार यह थी कि शांत रहो और चिंता मत करो। नतीजतन हममें से कई लोग घरों से बाहर नहीं निकले (जैसा कि सामान्यतः करते) और कई की जानें चली गईं।"

वास्तव में वैज्ञानिकों के उक्त समूह में से दो ने शहर के मेयर के साथ एक पत्रकार वार्ता की थी जहां उन्होंने कहा था कि हालात सामान्य हैं और खतरे की कोई बात नहीं है। मुकदमे का आधार यही है। यह स्वीकार करने की बजाय कि भूकंप सम्बंधी भविष्यवाणियां अनिश्चित होती हैं, वैज्ञानिकों ने दावा किया कि कोई खतरा नहीं है। प्राकृतिक आपदा व जोखिम विज्ञान के प्रोफेसर डॉ.

विली एस्पिनाल का मत है कि संवेदनशील परिस्थितियों में वैज्ञानिकों को चाहिए कि वे सामाजिक मीडिया (जैसे पत्रकार वार्ता) के उपयोग के बारे में सावधानीपूर्वक सोचें और कानूनी नुक्तों पर भी ध्यान दें। उनके ही शब्दों, ''दुनिया मुकदमेबाज़ी का अखाड़ा है और वैज्ञानिकों को कोई सुरक्षा कवच हासिल नहीं है।''

समाज के साथ विज्ञान का संवाद अपेक्षाकृत नई बात है। विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के परिणामों का उपयोग उद्योगों द्वारा किया जाता है। ज़्यादा अहम बात यह है कि सरकारें इनका व्यापक उपयोग समाज के लिए करती हैं। जब वैज्ञानिकों को सरकार व नागरिकों को ऐसे मुद्दों पर सलाह देने के लिए कहा जाता है, जिनका असर प्राकृतिक संसाधनों और लोगों के रोज़मर्रा के जीवन पर होने वाला है, तो उन्हें समाज की आवाज़ के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।

समाज व विज्ञान के बीच इस विनिमय में टकराव की संभावना होती है। सामाजिक उद्देश्यों के लिए विज्ञान के उपयोग सम्बंधी निर्णयों में स्थिति कभी सीधी-सरल नहीं होती। 'क' क्रिया का परिणाम 'ख' हो सकता है, मगर वह 'ग', 'घ' का भी सबब बन सकती है। और जब कभी भी 'क' के उपयोग का फैसला लिया जाता है तो 'ख' की ही बातें की जाती हैं, उसी पर ज़ोर दिया जाता है। मगर जो लोग 'ग' और 'घ' परिणामों से प्रभावित होते हैं, वे अपनी आवाज़ उठाते हैं। इन आवाज़ों को खामोश करके निर्णय पर अमल की कोशिशें टकराव को जन्म देती हैं।

यह बात हम अपने समाज में भी देख सकते हैं - मुद्दा चाहे जिनेटिक रूप से परिवर्तित जीवों का हो, परमाणु ऊर्जा का हो, या क्लीनिकल ट्रायल्स का। इनमें से हर मामले में लाभ भी हैं और जोखिम भी। किसी भी टेक्नॉलॉजी के इस्तेमाल से पहले सारे सम्बंधित व्यक्तियों को शामिल करके हर लाभ और हर जोखिम को संबोधित करना ज़रूरी है।

यहां पर समाज वैज्ञानिक एक अहम भूमिका निभाते हैं। एक प्रखर समाज वैज्ञानिक विश्लेषक डॉ. शिव विश्वनाथन ने हाल ही में कहा है कि कैसे वैज्ञानिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं को मिलकर काम करना चाहिए, दोनों को एक-दूसरे की चुनौतियों को समझने की कोशिश करनी चाहिए। जब सवाल उठाए जाएं तो वैज्ञानिकों को अपना आपा नहीं खोना चाहिए, न ही कार्यकर्ताओं को दोषारोपण करना चाहिए। प्रशासन के संचालन के लिए वैज्ञानिक ज्ञान पर सवाल उठाना ज़रूरी है मगर यह काम सिर्फ वैज्ञानिक या विशेषज्ञ करें यह ज़रूरी नहीं है।

वे कहते हैं कि हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं, जहां कई क्षेत्रों में वैज्ञानिक ज्ञान सुनिश्चित जवाब नहीं देता। वैसे यह एक मज़ेदार कथन है क्योंकि वैज्ञानिक तो इस बात को पहले से जानते हैं। यदि विभिन्न कारक परिणाम को प्रभावित करते हैं, तो विज्ञान कभी एक पक्का जवाब नहीं देता। जैसा कि 1974 में जीव वैज्ञानिक पौल एरलिश ने कहा था, ''हर चीज़ हर अन्य चीज़ पर निर्भर होती है।''

विश्वनाथन का यह वक्तव्य तो और भी विचित्र है कि विज्ञान की यह शास्त्रोक्त परिभाषा त्रुटिपूर्ण है कि विज्ञान सार्वजनिक व प्रमाणित करने योग्य ज्ञान है। विज्ञान अवश्य ही सार्वजनिक है। किसी अन्य चीज़ के मुकाबले विज्ञान कहीं ज़्यादा सत्यापन-योग्य व प्रमाणित करने योग्य भी है। विज्ञान कहता है कि 'क' का परिणाम 'ख' हो सकता है मगर 'ग', 'घ' भी हो सकता है और इसमें से चयन का काम समाज में संवाद के माध्यम से करना होगा।

मुझे यह भी लगता है कि भारत में हम लोग ज्ञानशास्त्र या सत्य और वैध ज्ञान के नाते विज्ञान के सिद्धांतों की चिंता नहीं करते। ये चिंताएं वहां ज़्यादा मुखर होती हैं जहां विचारधारा और आस्था प्रणालियों का विज्ञान के साथ सीधा टकराव है (जैसे सृष्टिवाद बनाम जैव विकास)। इस लिहाज़ से यह आरोप भी थोड़ा कठोर ही कहा जाएगा कि विज्ञान 'अचूक स्वनामधन्य धर्मशास्त्र' बन गया है। दरअसल विज्ञान ही एकमात्र ऐसी ज्ञान प्रणाली है जो अपनी चूक को स्वीकार करती है और लगातार सुधार का प्रयास करती है। ***(स्रोत फीचर्स)***